तीन-दिवसीय द्वितीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठी गोरखपुर में सम्पन्न

21वीं सदी का मज़दूर आन्दोलनः नयी चुनौतियाँ, नये रास्ते, नयी दिशा

साथी अरविन्द की स्मृति में पिछले वर्ष प्रथम अरविन्द स्मृति संगोष्ठी का आयोजन दिल्ली में हुआ था, जिसमें देश-विदेश से क्रान्तिकारी संगठनों के प्रतिनिधियों, कार्यकर्ताओं, बुद्धिजीवियों और शोधकर्ताओं ने शिरक़त की थी। इस वर्ष द्वितीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठी को एक दिन की बजाय तीन दिन का रखा गया और इसे गोरखपुर में आयोजित किया गया। पिछले बार के विषय को ही विस्तार देते हुए इस बार **'21वीं सदी में भारत का मज़दूर आन्दोलनः निरन्तरता और परिवर्तन, दिशा और सम्भावनाएँ, समस्याएँ और चुनौतियाँ'** विषय पर विस्तृत चर्चा हुई।

संगोष्ठी की शुरुआत 26 जुलाई को गोरखपुर के चित्रगुप्त मन्दिर के परिसर में हुई। पहले दिन 'शहीदों के गीत' के साथ साथी अरविन्द की तस्वीर पर माल्यार्पण किया गया और उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए संगोष्ठी की शुरुआत की गयी। दिल्ली विश्वविद्यालय से आयी छात्रों-नौजवानों की सांस्कृतिक टोली 'विहान' ने गीत को पेश किया। इसके बाद पहले सत्र की शुरुआत हुई। पहले सत्र में साथी अरविन्द की जीवन-साथी कॉमरेड मीनाक्षी ने **अरविन्द स्मृति न्यास** की स्थापना की घोषणा की और साथ ही उसके लक्ष्यों की एक रूपरेखा प्रस्तुत की। इसके बाद राहुल फाउण्डेशन के साथी सत्यम ने अरविन्द स्मृति न्यास की योजनाओं में विभिन्न ज़िम्मेदारी उठाने वाले साथियों और प्रमुख न्यासकर्ताओं का परिचय सदन से कराया और औपचारिक रूप से अरविन्द स्मृति न्यास की स्थापना हुई। इस पहले सत्र में साथी अरविन्द को याद करते हुए गोरखपुर के वरिष्ठ बुद्धिजीवी श्री फतेह बहादुर सिंह, प्रसिद्ध हिन्दी कहानीकार मदन मोहन और मुम्बई से आए आनन्द ने वक्तव्य रखे। इस सत्र की अध्यक्षता मुम्बई के 'विस्थापन विरोधी जनान्दोलन' के साथी शिरीष मेंढी, छत्तीसगढ़ माइंस श्रमिक संघ के सचिव और छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के उपाध्यक्ष साथी गणेशराम चौधरी, अनुराग ट्रस्ट की प्रमुख न्यासकर्त्री श्रीमती कमला पाण्डेय और हिन्दी की चर्चित कवयित्री कात्यायनी ने की।

विहान के साथी गीत पेश करते हुए

पहले दिन के दूसरे सत्र में 'मुक्तिकामी छात्रों-युवाओं की आह्वान' के सम्पादक अभिनव ने संगोष्ठी के अपने प्रमुख अवस्थिति पत्र की प्रस्तुति की। इस पेपर का विषय था **'भूमण्डलीकरण के दौर में मज़दूर वर्ग के आन्दोलन और प्रतिरोध के नये रूप और रणनीतियाँ'**। पेपर की प्रस्तुति करते हुए अभिनव ने कहा कि पूरी दुनिया में आज मज़दूर आन्दोलन गम्भीर संकट का शिकार है। एक ओर तो इस संकट का कारण इस बात में निहित है कि 'तीसरी दुनिया' के अधिकांश देशों में कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी ताक़तें कार्यक्रम के मामले में एक गलत समझ का शिकार हैं। अधिकांश कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी समूह तुर्की, इण्डोनेशिया, भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, मिस्र, ब्राज़ील, अर्जेण्टीना, मेक्सिको, दक्षिण अफ्रीका जैसे विचारणीय पूँजीवादी विकास वाले देशों में भी आज तक 1960 के दशक में माओ द्वारा तीसरी दुनिया के देशों में क्रान्ति के कार्यक्रम के लेकर पेश किये गये सामान्यीकृत सूत्रीकरण से चिपके हुए हैं और सामन्तवाद-साम्राज्यवाद विरोधी नवजनवादी क्रान्ति की कार्यदिशा को लागू कर रहे हैं। जबकि इन देशों में पूँजीवादी उत्पादन पद्धति प्रमुख उत्पादन पद्धति बन चुकी है और एक विशालकाय मज़दूर वर्ग अस्तित्व में आ चुका है। और वास्तव में तो वे नवजनवादी क्रान्ति की कार्यदिशा को भी ढंग से लागू नहीं कर रहे हैं क्योंकि वे माओ की इस शिक्षा को भूल जाते हैं कि नवजनवादी क्रान्ति की मंज़िल में भी मज़दूर वर्ग ही नेतृत्वकारी शक्ति होता है; किसान मुख्य शक्ति होते हैं। लेकिन कम्युनिस्ट पार्टी मज़दूर वर्ग की ही हिरावल होती है और मज़दूर वर्ग के बीच लेनिनवादी पद्धति से काम किये बग़ैर ऐसी किसी कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण सम्भव ही नहीं है।

अभिनव ने आगे कहा कि दूसरा कारण है 1960 के दशक के उत्तरार्द्ध से विश्व पूँजीवाद की कार्यप्रणाली में आए बदलाव। इन बदलावों की चर्चा करते हुए विश्व पूँजीवाद का एक संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत किया गया। 1870 से लेकर 1945 तक के समय की चर्चा करते हुए अभिनव ने 1870 की पहली वैश्विक पूँजीवादी संकट की चर्चा की। यह मन्दी साम्राज्यवाद के उदय के दौर के साथ ही आयी थी। राष्ट्रीय सीमाओं में अति-उत्पादन और पूँजी की प्रचुरता का संकट उसी रूप में उपस्थित हुआ था, जिस रूप में मार्क्स ने उसके बारे में बताया था। इस मन्दी के साथ ही विश्व पूँजीवाद ने अपनी कार्यप्रणाली में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये जिनका शानदार अध्ययन लेनिन ने अपनी रचना 'साम्राज्यवादः पूँजीवाद की चरम अवस्था' में किया है। इसमें सबसे प्रमुख थे वित्तीय पूँजी का प्रभुत्व, बैंकों का उदय, विश्व का साम्राज्यवादी ताक़तों के बीच बँटवारा और उसके

लिए युद्ध और पूँजी का निर्यात। जैसा कि लेनिन ने बताया था, 20वीं सदी के दूसरे दशक में उदीयमान साम्राज्यवादी ताक़तों और पारम्परिक साम्राज्यवादी ताक़तों के बीच दुनिया के पूँजीवादी लूट के बँटवारे के लिए प्रथम विश्व युद्ध हुआ। इस युद्ध से उबरने की प्रक्रिया चल ही रही थी की पूँजीवादी विश्व अब तक की सबसे बड़ी मन्दी का शिकार हो 'या: 1930 के दशक की महामन्दी। इस महामन्दी के बाद द्वितीय विश्वयुद्ध हुआ और इसका समापन फासीवादी जर्मनी और इटली की हार, विश्व के समाजवादी और पूँजीवादी शिविरों में बँटवारे और पुनर्निर्माण कार्यक्रमों के बूते विश्व पूँजीवाद के चौधरी के तौर पर संयुक्त राज्य अमेरिका के उदय के साथ हुआ। सोवियत संघ एक अजेय शक्ति के रूप में उभर चुका था और वहाँ समाजवाद के महान प्रयोगों के जरिये जनता के जीवन-स्तर में ज़बर्दस्त स्तरोन्नयन हो रहा था।

मन्दी के अनुभव और समाजवादी शिविर की मौजूदगी के दबाव में पूँजीवादी देशों में "कल्याणकारी" राज्य का उदय हुआ जिसके तहत कीन्सियाई नुस्खों को अमल में लाया गया। उत्पादन को पूरी तरह बाज़ार के रहम पर छोड़ने की बजाय पूँजीवादी राज्य का प्रत्यक्ष हस्तक्षेप होता था और मज़दूरों और कर्मचारियों को तरह-तरह की छूटें और सहूलियतें दी गयीं। वित्तीय पूँजी पर भी कई तरह के विनियमन लादे गये। 1930 की मन्दी के बाद के दौर में अमेरिका में फोर्डिज़्म की उत्पादन तकनीक का उदय हुआ जिसके तहत एक ही दैत्याकार कारखाने में पूरे माल का उत्पादन किया जाता था। इन कारखानों में कई बार 30 से 40 हज़ार मज़दूर भी काम करते थे। वे वास्तव में कारखाने नहीं बल्कि एक छोटी-सी बस्ती हुआ करते थे। फोर्डिज़्म के दौर में ही आज हम जिस प्रकार के ट्रेडयूनियन आन्दोलन को जानते हैं उसका उदय हुआ। यानी, पूरी तरह कारखाना-केन्द्रित मज़दूर आन्दोलन। फोर्डिस्ट असेम्बली लाइन पर हज़ारों मज़दूरों के साथ होने वाला उत्पादन लम्बे समय तक पूँजीवाद का प्रमुख अधिशेष नियोजन का प्रभुत्वशाली मैकेनिज़्म बना रहा। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से लेकर 1970 के दशक के शुरुआती वर्षों तक का दौर विश्व पूँजीवाद के लिए एक स्वर्णिम काल था।

अभिनव प्रमुख अवस्थिति पत्र पेश करते हुए

लेकिन 1970 के दशक के साथ ही पूँजी फिर से इतनी फूल चुकी थी कि राष्ट्रीय सीमाओं के भीतर और "कल्याणकारी" ढाँचे के भीतर उसका दम घुटने लगा। नतीजे के रूप में 1973 का विश्वव्यापी पूँजीवादी संकट, डॉलर-गोल्ड मानक का ढहना और ओपेक तेल संकट पैदा हुआ। इस संकट के बाद विश्व में उस प्रक्रिया की शुरुआत हुई जिसे हम भूमण्डलीकरण के रूप में जानते हैं। इसके साथ ही विश्व में फोर्डिज़्म का भी पतन शुरू हुआ। 1980 के दशक में वे सभी संस्थाएँ एक-एक करके अस्तित्व में आने लगीं जिनसे भूमण्डलीकरण की पहचान की जाती है। भूमण्डलीकरण के दौर में अभिनव ने तीन महत्वपूर्ण परिवर्तनों की ओर ध्यानाकर्षित किया। पहला था नवउदारवादी भूमण्डलीकरण की नीतियों के जरिये श्रम बाज़ारों को पूरी तरह लचीला बना देना; दूसरा था, फोर्डिज़्म का पतन; और तीसरा था, सूचना प्रौद्योगिकी और संचार क्रान्ति। इन परिवर्तनों ने दुनिया भर में श्रम के अनौचारिकीकरण को जन्म दिया, बढ़ाया और सम्भव बनाया। श्रम के अनौपचारिकीकरण के साथ ही एक वैश्विक असेम्बली लाइन अस्तित्व में आने लगी। अब उत्पादन एक विशालकाय कारखानों की बजाय कई छोटे कारखानों में होने लगा। इससे मज़दूर कार्यस्थल के पैमाने पर बिखर गये और उनका प्रतिरोध तोड़ने में पूँजीपति वर्ग को मदद मिली। यह अनौपचारिक मज़दूर वर्ग एक प्रकार से 'फुटलूज़ लेबर' है। इसे किसी एक कार्यस्थान पर नहीं पकड़ा जा सकता। पेशागत गतिमानता इतनी ज़्यादा है कि इस मज़दूर वर्ग को उसकी रिहायश में पकड़ना होगा। कारखाना आधारित ट्रेड यूनियन आन्दोलन की असफलता के पीछे एक बड़ा कारण यह है कि फोर्डिज़्म के दौर की कार्यप्रणाली को वह उत्तरफोर्डिस्ट दौर में लागू करना चाहता है और वह अब सम्भव रह नहीं गया है।

पेपर में यह भी दिखलाया गया कि अनौपचारिक मज़दूरों के बढ़ते जाने और उनके क्रान्तिकारी चरित्र को लेकर मार्क्स से लेकर लेनिन तक ने लिखा है और यह फोर्डिस्ट दौर में पैदा हुआ एक पूर्वाग्रह और उसका हैंगओवर है जो आन्दोलन को कारखाने से निकलने नहीं दे रहा है और कारखाने के भीतर उसकी मौजूदगी बिना रिहायशी संगठन के आधार के, अधिक से अधिक मुश्किल होती जा रही है। आज के समय में मज़दूरों के हिरावल को उन्हें संगठित करने के लिए उनकी बस्तियों और रिहायशी इलाकों में जाना होगा; वहाँ उनकी इलाकाई और पेशागत ट्रेड यूनियनें खड़ी करनी होंगी। इन ट्रेड यूनियनों को संगठित किये बिना कारखाने में भी मज़दूरों की संगठित लड़ाई खड़ी कर पाना आज अधिक से अधिक कठिन होता जा रहा है। अनौपचारिक मज़दूर वर्ग पेशागत संकुचन, अर्थवाद, ट्रेडयूनियनवाद, अराजकतावादी संघाधिपत्यवाद आदि जैसी मज़दूर वर्ग-विरोधी प्रवृत्तियों से अपेक्षाकृत कम प्रभावित होता है। यह नया अनौपचारिक मज़दूर वर्ग अत्यधिक विशाल, बहुकुशल, वर्ग सचेत और राजनीतिक रूप से अधिक सम्भावना सम्पन्न है। इसके अलावा कोई भी रिहायशी ट्रेड यूनियन ऐसे मसलों पर संघर्ष कर सकती है जिन पर एक पारम्परिक कारखाना-आधारित ट्रेड यूनियन नहीं कर सकती। जैसे कि पानी, बिजली, आवास, सड़क, शिक्षा और चिकित्सा जैसे अधिकार जिन्हें कई बार नागरिक माँगों की संज्ञा दी जाती है। लेकिन ये माँगें मज़दूर वर्ग को सीधे पूँजीवादी राज्यसत्ता के समक्ष खड़ा करती हैं और पूँजीवाद को कठघरे में लाती हैं। राजनीतिक चेतना के स्तरोन्नयन के मद्देनज़र और बुर्जुआ जनवाद के छल-छद्म उजागर करने के मद्देनज़र इन माँगों में ज़बर्दस्त सम्भावना होती है क्योंकि तब मज़दूर वर्ग अपनी नागरिक पहचान पर दावा ठोंकता है।

इस प्रमुख अवस्थिति पत्र के समापन के बाद पहला दिन समाप्त होने की ओर था और दो वक्ताओं, स्त्री मुक्ति लीग की

शिवानी और नौजवान भारत सभा के प्रेमप्रकाश, के हस्तक्षेप के बाद पहला दिन समाप्त हुआ।

दूसरे दिन के पहले सत्र में अभिनव द्वारा पेश प्रमुख पत्र पर अपनी बात रखने वालों में 'इंक़लाबी मज़दूर' के नगेन्द्र, 'उज्ज्वल ध्रुव तारा' के कॉमरेड जी.पी. मिश्रा, नौजवान भारत सभा के नवीन, बिहार से आए कॉमरेड चन्द्रेश्वर राम और दिल्ली मेट्रो कामगार यूनियन के अजय स्वामी प्रमुख थे। 'इंक़लाबी मज़दूर' के नगेन्द्र ने पेपर पर टिप्पणी करते हुए कहा कि आज भी कारखाना-केन्द्रित मज़दूर आन्दोलन ही प्रमुख हैं और फोर्डिज़्म के पराभव के बाद भी संघर्ष को उत्पादन के स्थल पर ही संगठित किया जा सकता है। इसे रिहायश के इलाके में ले जाने का अर्थ होगा संघर्ष को उत्पादन से उपभोग की ओर ले जाना; नगेन्द्र ने अपनी अवस्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा कि रिहायशी यूनियनें भी बनानी होंगी लेकिन कारखाना-आधारित ट्रेड यूनियनों का ज़माना बीता नहीं है। बाकी वक्ताओं ने प्रमुखत: पेपर की अवस्थिति का समर्थन किया।

गणेशराम चौधरी दूसरा अवस्थिति पत्र पेश करते हुए

साथी नगेन्द्र की आलोचनात्मक टिप्पणी का जवाब देते हुए अभिनव ने कहा कि कारखाना-केन्द्रित मज़दूर पर ज़िद के साथ ज़ोर देना आज की सच्चाइयों से मुँह मोड़ने जैसा है। निश्चित रूप से जहाँ भी सम्भव हो वहाँ कारखाना-आधारित यूनियनें भी बनायी जानी चाहिए, लेकिन वे भी आगे तभी बढ़ सकती हैं जब रिहायशी आधार पर संगठित यूनियन मौजूद हो। इसके अतिरिक्त, उत्पादन से उपभोग के क्षेत्र में जाने की बात बेतुकी है। साथी नगेन्द्र यह भूल गये कि पूँजीवादी समाज में मज़दूर की श्रम शक्ति भी एक माल होती है और उसके उत्पादन और पुनरुत्पादन की जगह कारखाना नहीं बल्कि रिहायश होती है। अभिनव ने कहा कि साथी नगेन्द्र की अवस्थिति में पारम्परिक ट्रेड यूनियनवाद और अर्थवाद की गन्ध आ रही है। उन्होंने नगेन्द्र के इस तर्क की आलोचना की कि आवास, चिकित्सा, पानी, बिजली, सड़क, सफाई जैसे नागरिक मुद्दों पर संघर्ष एन.जी.ओ. का काम है। अभिनव ने कहा कि यह एक त्रासद स्थिति है कि इन मुद्दों को एन.जी.ओ. ले उड़े हैं। वास्तव में तो यह ज़बर्दस्त राजनीतिक सम्भावना सम्पन्नता वाले मुद्दे हैं जिन्हें क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट संगठनों को उठाना चाहिए। अभिनव ने कहा कि साथी नगेन्द्र की सोच केवल कारखाना-केन्द्रित आर्थिक मुद्दों पर संघर्ष की है और यह मज़दूर वर्ग के आन्दोलन को उसी गोल चक्कर में घुमाता रहेगा, जिसे हम अर्थवाद-ट्रेडयूनियनवाद-सुधारवाद और अराजकतावादी संघाधिपत्यवाद के नाम से जानते हैं। अभिनव ने इस बात पर राहत जतायी कि साथी नगेन्द्र ने हाल ही में 'नागरिक' अखबार में लिखे अपने लेख की अवस्थिति में सुधार करते हुए इलाकाई संगठन बनाने को इस बार अपने आप में सुधारवाद का द्योतक नहीं बताया और कम-से-कम यह माना है कि इलाकाई ट्रेड यूनियन भी बनानी होगी।

दूसरे सत्र की शुरुआत छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के साथी गणेशराम चौधरी के अवस्थिति पत्र **'मज़दूर आन्दोलन की नयी दिशा: सम्भावनाएँ, समस्याएँ और चुनौतियाँ'** की प्रस्तुति के साथ हुई। पेपर की शुरुआत मज़दूर आन्दोलन में मौजूद विजातीय प्रवृत्तियों पर चर्चा के साथ हुई। सबसे पहले साथी गणेशराम ने संशोधनवाद, ट्रेडयूनियनवाद, अर्थवाद, सुधारवाद, अराजकतावाद और गैर-पार्टीवाद की आलोचना पेश की। "वामपंथी" दुस्साहसवादियों की आलोचना करते हुए बताया गया कि वे भी अर्थवाद के ज़्यादा जुझारू संस्करण को पेश करते हैं। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा ने शंकर गुहा नियोगी के नेतृत्व में एक ओर संशोधनवाद के ख़िलाफ़ संघर्ष किया तो वहीं उसने दुस्साहसवाद की भी कटु आलोचना की। इसके अतिरिक्त, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के प्रयोग ने रिहायशी आधार पर बनी यूनियन, मज़दूरों को राजनीति रूप से प्रशिक्षित कर संस्थाओं का निर्माण करना और जनाधार का निर्माण करने के महत्व को समझाया। साथी गणेशराम चौधरी ने इस दुस्साहसवादी धारा की विस्तृत आलोचना रखी, जिसकी नुमाइन्दगी भाकपा (माओवादी) कर रही है। उन्होंने बताया कि इस दुस्साहसवाद ने छत्तीसगढ़ के मज़दूर आन्दोलन में भी सेंध लगाई है और इस धारा कि विरुद्ध हालिया संघर्ष में जनदिशा को लागू करने वाली ताक़तों ने विजय हासिल की है। साथ ही साथी गणेशराम ने बताया कि छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा में संशोधनवाद के भटकाव का भी एक इतिहास मौजूद रहा था। इस भटकाव के सार-संकलन की जिस समय ज़रूरत थी, उसी समय शंकर गुहा नियोगी की हत्या हो गयी। उसके बाद, उनके अनुसरणकर्ताओं ने इन प्रवृत्तियों के ख़िलाफ़ संघर्ष किया। आज मज़दूर वर्ग को राजनीतिक रूप से शिक्षित-प्रशिक्षित करने, क्रान्तिकारी जनसंस्थाएँ खड़ी करने, पेशागत और इलाकाई ट्रेड यूनियनों का निर्माण करने और एक अखिल भारतीय क्रान्तिकारी पार्टी का निर्माण करना मज़दूर आन्दोलन के एजेण्डे पर उपस्थित सबसे महत्वपूर्ण सवाल हैं।

इसके बाद पंजाबी पत्रिका 'प्रतिबद्ध' के सम्पादक साथी सुखविन्दर ने अपना अवस्थिति पत्र पेश किया। इस पेपर का शीर्षक था **'भारत का मज़दूर आन्दोलन और कम्युनिस्ट आन्दोलन: अतीत के सबक, वर्तमान समय की सम्भावनाएँ और चुनौतियाँ'**। सुखविन्दर ने पेपर की मुख्य प्रस्थापना पेश करते हुए कहा कि भारत के कम्युनिस्ट आन्दोलन में मज़दूर आन्दोलन को संगठित करने और मज़दूर वर्ग के बीच राजनीतिक कामों को लेकर एक सही लेनिनवादी समझदारी का अभाव शुरू से ही रहा था। राजनीतिक संघर्ष और आर्थिक संघर्ष के बीच के अन्तर और उनके अन्तर्सम्बन्ध को भारत का कम्युनिस्ट नेतृत्व कभी सही ढंग से समझ नहीं पाया। 1920 से 1951 के दौर में मज़दूरों के बीच कम्युनिस्टों के काम को ट्रेडयूनियनवाद और अर्थवाद का शिकार माना जा सकता है। 1951 के बाद भारत की कम्युनिस्ट पार्टी संशोधनवाद के गड्ढे में जा गिरी। 1967 में संशोधनवाद की प्रतिक्रिया के रूप में जो लाइन पैदा हुई वह "वामपंथी" दुस्साहसवाद के दूसरे छोर पर जा पहुँची और उसे

जनकार्य अपने आपमें संशोधनवाद लगने लगा। नक्सलबाड़ी के बाद भी जनदिशा की कोई समझदारी अभी भी नहीं थी। ट्रेडयूनियन कार्य के नाम पर लेनिनवाद तरीके से मज़दूर वर्ग को आर्थिक माँगों पर लड़ना सिखाने और राजनीतिक रूप से उन्हें प्रशिक्षित करने का काम नहीं हो रहा था, बल्कि जुझारू किस्म का ट्रेडयूनियनवाद हो रहा था। इस प्रकार जहाँ तक मज़दूर आन्दोलन की बात थी, तो वह अर्थवाद, ट्रेडयूनियनवाद, सुधारवाद और अराजकतावाद के भँवर से कभी निकल नहीं पाया। सुखविन्दर ने आगे भारत के कम्युनिस्ट आन्दोलन और नेतृत्व द्वारा की गई गम्भीर चूकों की ओर ध्यानाकर्षित करते हुए तेलंगाना संघर्ष में कम्युनिस्ट नेतृत्व द्वारा की गई ग़लती, 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के दौरान लिये गये ग़लत निर्णय, नौसेना विद्रोह के समय चूके गये मौके, आदि का ज़िक्र करते हुए बताया कि भारत का कम्युनिस्ट नेतृत्व बौद्धिक और वैचारिक-राजनीतिक तौर पर बेहद कमज़ोर था और प्रमुख निर्णयों के लिए अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट नेतृत्व पर भी उसकी काफ़ी निर्भरता रहती थी। यही कारण था कि एक लम्बे समय तक भारत की कम्युनिस्ट पार्टी बिना किसी कार्यक्रम के काम करती रही; यही कारण था कि अपने देश के उत्पादन सम्बन्धों के गम्भीर अध्ययन का काम पार्टी ने कभी अपने हाथ में लिया ही नहीं; यही कारण था कि संशोधनवाद के विरुद्ध कोई संघर्ष चला पाने में नेतृत्व असफल रहा। 1951 में तेलंगाना की पराजय के बाद पार्टी संशोधनवाद का शिकार हो गयी। 1967 में नक्सलबाड़ी उभार अपनी ज़बर्दस्त सम्भावनाओं के बावजूद "वामपंथी" दुस्साहसवाद के गड्ढे में चला गया। भारतीय क्रान्ति के कार्यक्रम को लेकर कम्युनिस्ट आन्दोलन में पहले भी सही समझदारी का अभाव था और नक्सलबाड़ी उभार के दौर में भी क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट नेतृत्व के पास कोई विश्लेषण मौजूद नहीं था। नतीजतन, आज मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिविर मूलत: और मुख्यत: विघटित हो चुका है। ऐसे में आज के संजीदा और सोचने-समझने वाले कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के सामने जो प्रमुख कार्यभार है, वह है पार्टी निर्माण का। आज नये कम्युनिस्ट तत्व का निर्माण करते हुए अखिल भारतीय पार्टी निर्माण की ओर आगे बढ़ना होगा।

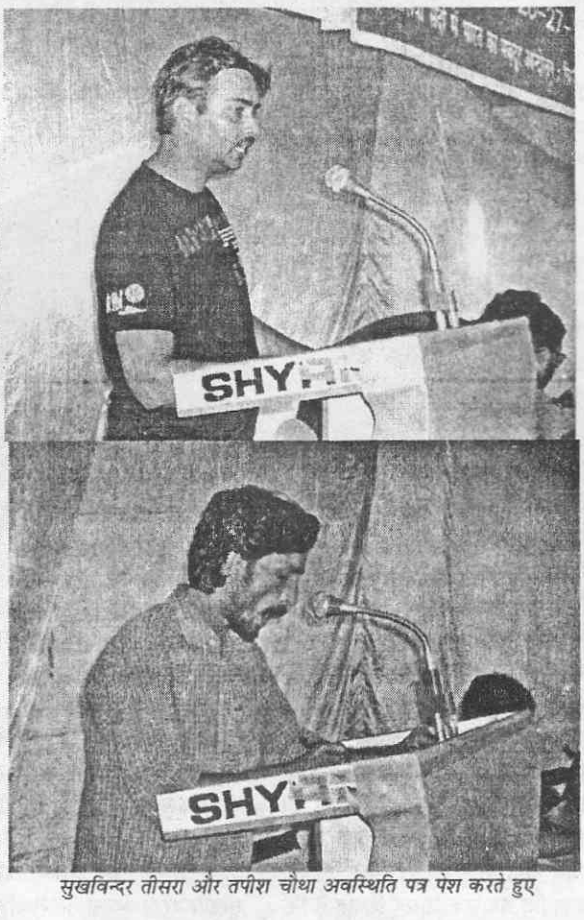

सुखविन्दर तीसरा और तपीश चौथा अवस्थिति पत्र पेश करते हुए

आख़िरी दिन की शुरुआत में बिगुल मज़दूर दस्ता के तपीश मैण्डोला ने अपने पेपर में साम्राज्यवाद की कार्यप्रणाली में बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आए परिवर्तनों पर केन्द्रित करते हुए लेनिन के समय के साम्राज्यवाद से उसके फर्क पर बात की। तपीश ने कहा कि हम आज भी साम्राज्यवाद के दौर में जी रहे हैं, हम आज भी सर्वहारा क्रान्तियों के दौर में जी रहे हैं। लेकिन आज का साम्राज्यवाद लेनिन के समय के साम्राज्यवाद से कहीं ज़्यादा परजीवी, खोखला और मरणासन्न है। अपनी तमाम सैन्य शक्ति के बावजूद यह अन्दर से ही ढह रहा है। आज यह अपनी शक्ति के बल पर नहीं बल्कि क्रान्तिकारी क्षमता वाले प्रतिरोध की अनुपस्थिति में टिका हुआ है। राष्ट्रपारीय निगम कई देशों में शासनकारी स्थिति में दिख रहे हैं और राष्ट्र-राज्यों की भूमिका सतही तौर पर देखने पर ख़त्म होती-सी दिखती है। लेकिन वास्तव में राष्ट्र-राज्य की भूमिका का रूपान्तरण हुआ है, उसका समापन नहीं। आज भी किसी राष्ट्रपारीय निगम के हितों की रक्षा का सवाल आता है तो उसके पितृदेश का पूँजीपति वर्ग और पूँजीवादी राज्यसत्ता ही उपस्थित होती है। आज के साम्राज्यवाद के दौर में किसी विश्वयुद्ध की सम्भावना कम रह गयी है। आज महाद्वीपीय और क्षेत्रीय युद्ध तो होंगे लेकिन कोई विश्वयुद्ध जैसी स्थिति पैदा हो इसकी उम्मीद कम ही है। आज का साम्राज्यवाद पहले से अधिक मरणासन्न हो चुका है। लेकिन क्रान्तिकारी आन्दोलन विश्व भर में एक गाँठ का शिकार है–नवजनवादी क्रान्ति की गाँठ। जब तक सभी क्रान्तिकारी सम्भावना वाले देशों के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी नवजनवादी क्रान्ति की गाँठ को काटते नहीं तब तक मज़दूर आन्दोलन और कम्युनिस्ट आन्दोलन एक गम्भीर संकट का शिकार रहेगा और अपने लाख संकट के बावजूद साम्राज्यवाद युद्धों को पैदा कर-करके अपने अस्तित्व को खींचता जाएगा।

आखिरी दिन के पहले सत्र की अध्यक्षता जी.पी. मिश्र और मीनाक्षी ने की। दूसरे सत्र में अध्यक्षता की जिम्मेदारी बादाम मज़दूर यूनियन के आशीष और बिगुल मज़दूर दस्ता के राजविन्दर ने उठायी। इस सत्र में बहस जारी रही। अखिरी दिन हस्तक्षेप करने वालों में शिवानी, प्रेमप्रकाश, सत्यनारायण, आशीष, लखविन्दर, डा. अमरनाथ द्विवेदी, प्रशान्त, नगेन्द्र, आनन्द, जयपुष्प, रवीन्द्र नाथ राय, शिरीष मेंढी, रामाशीष गुप्ता, सुखविन्दर और अभिनव प्रमुख थे। आखिरी दिन काफी देर तक बहस चलती रही और अन्त में इस बहस को आगे जारी रखने के संकल्प के साथ संगोष्ठी का औपचारिक समापन हुआ। आखिरी दिन, 'सॉल्ट ऑफ दि अर्थ' नामक फिल्म का प्रदर्शन देर रात में किया गया। इससे पहले के दिन के समापन के बाद दिल्ली विश्वविद्यालय से आयी सांस्कृतिक टोली विहान से संगीत संध्या का आयोजन किया था।